लोक संस्कृति में निहित लोक कल्याण

-डॉ अन्नपूर्णा सिसोदिया

लोकगीतों की गमक लिए, खेतों की माटी से उठती सौंधी गंध से सुहासित बयार और प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य से शृंगारित लोक संस्कृति सदैव कवियों, साहित्यकारों, शोधकर्ताओं और समस्त संसार के लिए आकर्षण का केंद्र रही है। हमारे जातीय इतिहास की झांकी को हम आज भी थोड़े बहुत परिवर्तन के बावजूद भी यहां महसूस कर सकते हैं।

हालांकि सुरसा के मुंह की भांति बढ़ते शहरीकरण के प्रभाव से आज के गांव भी अछूते नहीं रह गए हैं। हल चलाते किसानों के मुक्त कंठ से फूटती सुरीली तानों का स्थान ट्रेक्टर की कर्कश ध्वनि ने ले लिया है। अब बिजली की चक्कियों ने मुंह अंधेरे चक्की पीसती महिलाओं के मुख से निकली स्वर लहरियों से प्रात: रश्मियों को वंचित कर दिया है। टी.वी. के आगमन ने संध्या को सजने वाली चौपालों की रौनक छीन ली है फिर भी कहीं से कोई निश्छल हवा का झोंका आकर आज भी मन को हरा कर देता है।

शहरी संस्कृति भले ही अपने बनावटी परिवेश के कारण अधिक आकर्षक लग सकती है। आधुनिक वस्त्राभूषण और भारी मेकअप से सजी आधुनिका के समान चकाचौंध से भरी शहरी सभ्यता के मानव जंगल, मनुष्य को लुभा सकते हैं किन्तु इससे लहंगा ओढ़नी में लिपटी आंचलिक रूप और यौवन की उमंग से भरी अल्हड़ ग्रामीण बाला रूपी लोक-संस्कृति का आकर्षण कम नहीं हो जाता। उसका सहज, सरल और अकृत्रिम रूप-माधुर्य अपने सम्मोहनकारी प्रभाव से सहृदयी के हृदय को रससिक्त किए बिना नहीं रहता।

अंचल विशेष के सुख-दु:ख, आशा-निराशा, भावनाएं और परंपराएं लोकगीतों के रूप में उद्घाटित होती हैं। लोकजीवन की जैसी सहज, सरल, नैसर्गिक अनुभूति की अभिव्यंजना लोकगीतों व लोक कथाओं में मिलती है, वैसा अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। इन लोकगीतों में लोक मानव के हृदय के उद्गार प्रकट होते हैं। प्रकृति स्वयं गाती-गुनगुनाती है, पहाड़ों की पांखें बोलने लगती हैं, अमराइयों में सजे झूलों से उठने वाले लोकगीतों के स्वर समूचे वातावरण को मोहित कर देते हैं। लोकजीवन में पग-पग पर लोक संस्कृति के दर्शन होते हैं। लोक संस्कृति का इतिहास मानव के आदिकाल से जुड़ा होने से उसमें जनजीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति के सभी रंग समाहित हैं।

किसी देश की लोकसंस्कृति का महत्त्व उस देश के लोक जीवन में निर्विवाद है। लोकसंस्कृति में परिवर्तन की गति अत्यंत मंथर होती है। उसमें स्थायित्व अधिक होता है और परिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति बहुत कम होती है। उसका अपना स्वतंत्र प्रवाह होता है, युगों के प्रयत्न से इसमें किंचित परिवर्तन होता है, लोकसंस्कृति लोक अर्थात् जनसामान्य की संपत्ति होती है।

सैद्धान्तिक रूप से लोक संस्कृति की चिन्तना लोक दर्शन और लोक धर्म से अनुशासित होती है। लोक दर्शन में किसी विशिष्ट दर्शन और मतवाद तथा लोक धर्म में किसी कट्टर धार्मिकता और साम्प्रदायवाद के लिए कोई स्थान नहीं होता है। इसलिए लोक संस्कृति के लोक मूल्य किसी सम्प्रदायगत या जातीय मान्यता से नियंत्रित नहीं होते। लोक जीवन में कोई क्लिष्टता नहीं है कहीं कोई भेदभाव नहीं है, सभी समान हैं।

आज जो समाज के हालात हैं संवेदनाओं के विलुप्तिकरण के इस दौर में लोक संस्कृति के उदात्त तत्त्वों को सहेजने की फिर से आवश्यकता है। आए दिन हम बेटियों और महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार, बुजुर्गों की उपेक्षा, बालकों के प्रति अन्याय, पशुओं पर अत्याचार तथा पेड़-पौधों और पर्यावरण के प्रति घोर लापरवाही देख रहे हैं। ऐसे में फिर से जरूरत है उस भारतीय लोक संस्कृति की